क़ुरआन

और

आधुनिक विज्ञान

डॉ॰ मौरिस बुकैले

(फ्रेंच अकादमी आफ़ मेडिसिन)

अनुवादक

जवाहर लाल कौल

(सप्ताहिक 'दिनमान' नई दिल्ली)

विषय-सूची

विषय वस्तु	4
क़ुरआन और आधुनिक विज्ञान	6
क़ुरआन समझने के लिए बहुपक्षीय एवं विस्तृत ज्ञान की ज़रूरत है	9
ब्रह्माण्ड की सृष्टि	12
खगोल-विज्ञान—प्रकाश और गति	16
पृथ्वी	19
मानव-सृजन	23
क़ुरआन और बाइबिल	26
'वह्य' (Revelation) की रोशनी	32
जीवन क्या है?	32
मानव-जाति	32
ईश्वरीय पथ-प्रदर्शन	33
प्रकाशना	33
अन्तिम प्रकाशना	33
सच्चाई का मापदंड	34
प्रिय पाठकगण	35

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह, दयावान कृपाशील के नाम से'

विषय वस्तु

इस पुस्तक में डॉ० बुकैले ने कुरआन के साथ अपने साक्षात्कार का उल्लेख किया है। उनके अपने शब्दों में, "आरम्भ में, इस्लाम के प्रति आस्था ने नहीं, बल्कि सच्चाई के सरल अनुसंधान ने ही मेरा मार्ग-दर्शन किया। आज भी मेरे परीक्षण की पद्धति यही है। यह वह मुख्य तथ्य था, जिससे मुझे अध्ययन समाप्त करने पर, यह विश्वास हो गया कि कुरआन वास्तव में एक पैग़म्बर की ओर अवतरित ग्रन्थ है।" इस धारणा तक पहुंचाने वाला तथ्य यह था कि यह सोचा ही नहीं जा सकता कि "मुहम्मद (सल्ल०) के युग का कोई व्यक्ति उन दिनों में उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान की स्थिति के आधार पर ऐसे वक्तव्यों का लेखक हो सकता है।"

अपने अध्ययन के लिए डॉ० बुकैले ने क़ुरआन की ऐसी आयतों को जिनमें वैज्ञानिक आंकड़े हों, सृष्टि, खगोल-शास्त्र, पृथ्वी आदि सामान्य विषयों में वर्गीकृत किया।

सृष्टि के बारे में उन्होंने इस पुरानी पाश्चात्य धारणा (चाहे वह सुविचारित हो या अज्ञान की देन) का खंडन किया है कि मुहम्मद (सल्ल०) ने केवल बाइबिल की सामान्य धारणा का अनुसरण किया है। बाइबिल और कुरआन का तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि बाइबिल का कथन वैज्ञानिक दृष्टि से स्वीकार करने योग्य नहीं है, जबकि कुरआन का कथन न केवल आधुनिक विज्ञान के सिद्धांतों पर पूर्णतः ठीक उतरता है, बल्कि इसके साथ यह समय की ग़लत मान्यताओं से भी विलक्षण रूप से मुक्त है।

वे यह पूछते हैं कि फिर यह कल्पना भी कैसे की जा सकती है। कि एक व्यक्ति जो बाइबिल से प्रेरणा ले रहा हो, वह क़ुरआन का रचयिता हो और वह अपने तौर पर बाइबिल के कथन को संशोधित करके बह्माण्ड की सृष्टि के विषय में एक ऐसी सामान्य धारणा का विकास करे, जबकि यह धारणा उसकी मृत्यु के कई शताब्दियों के पश्चात तक मूर्तिमान नहीं हो सकी थी।

प्रस्तुत पुस्तक में आज के वैज्ञानिकों के लिए ख़ास तौर से तथा आधुनिक व्यक्ति के लिए सामान्यतः एक बहुमूल्य संदेश है, परन्तु यह कभी न भूलना चाहिए, जैसा कि लेखक ने स्वयं सावधान किया है कि क़ुरआन की अपनी अभिरुचि यह नहीं है कि उसे विज्ञान की एक पुस्तक समझा जाये, बल्कि यह एक अति उत्तम और अतुल्य धार्मिक पुस्तक है। क़ुरआन यदि मनुष्य को गोचर प्रकृति पर विचार करने का आमंत्रण देता है तो इससे उसका उद्देश्य केवल ईश्वर के सर्वशक्तिमान होने पर ज़ोर डालना है। इस विचार-प्रक्रिया के दौरान हमें ऐसी झलक मिलती है, जिसका संबंध वैज्ञानिक ज्ञान के आंकड़ों से है। यह तथ्य वास्तव में एक और ईश्वरीय उपहार है, जिसके महत्त्व को आज के भौतिकवादी नास्तिकता के युग में अवश्य पहचाना जाना चाहिए।

क़ुरआन और आधुनिक विज्ञान

1976 में 9 नवम्बर को फ्रांस की आयुर्विज्ञान अकादमी में "क़ुरआन में शरीर-विज्ञान तथा भ्रूण-विज्ञान से सम्बन्धित तथ्य" नाम से एक अभूतपूर्व भाषण दिया गया। मैंने क़ुरआन में मौजूद शरीर-विज्ञान तथा प्रजनन सम्बन्धी वक्तव्यों पर अपना किया हुआ अनुसन्धान प्रस्तुत किया। इस कार्य के लिए कारण मेरी दृष्टि में यह था कि प्रस्तुत विषय में आज हमारी जानकारी इतनी अधिक बढ़ गयी कि सामान्य रीति से इसका कारण निर्धारित करना असम्भव है कि क़ुरआन जिस युग की किताब है, उस युग में प्रस्तुत किए गए किसी भी ग्रन्थ में ऐसे विचार और धारणाएं पायी जायें, जिनकी खोज आधुनिक युग में ही हुई है।

आधुनिक युग से पूर्व का कोई भी मानव-रचित ग्रंथ ऐसा नहीं है, जो ज्ञान-विज्ञान में अपने समय की जानकारी से इतना आगे हो कि उसकी तुलना क़ुरआन से की जा सके।

इसके अतिरिक्त यह भी उचित समझा गया कि बाइबिल में वर्णित इसी प्रकार के तथ्यों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया जाये। इस तरह आधुनिक ज्ञान और एकेश्वरवादी धर्मों के पवित्र ग्रन्थों में पाये जाने वाले अवतरणों के आपसी अध्ययन की परियोजना बनायी गई। परिणामस्वरूप, "बाइबिल, क़ुरआन और विज्ञान" नामक एक पुस्तक प्रकाश में आयी। इसका पहला फ्रांसीसी संस्करण मई 1976 में (सेगलर्स, पैरिस) द्वारा प्रकाशित हुआ। अब इसके अंग्रेज़ी, अरबी और उर्दू संस्करण भी प्रकाशित हो चुके हैं।

यह कोई आश्चर्यजनक बात नहीं कि धर्म और विज्ञान इस्लाम

में जुड़वां बहनों के समान हैं, और आज जबकि विज्ञान ने इतनी प्रगति कर ली है, फिर भी दोनों का रिश्ता बराबर क़ायम है। इसके अतिरिक्त कुछ वैज्ञानिक तथ्यों का प्रयोग क़ुरआन के मूल पाठ को और भली-भांति समझने के ध्येय से भी किया जाता है। इस वैज्ञानिक शताब्दी में जहां बहुत-से वैज्ञानिक तथ्यों ने धार्मिक धारणाओं को आघात पहुंचाया है, इस्लामी अवतरण के तटस्थ निरीक्षण में ठीक उन्हीं वैज्ञानिक खोजों ने इस्लामी तथ्यों के असाधारण और ईश्वरीय कारनामा होने को उजागर किया है। लोग कुछ भी कहें परन्तु यह सत्य है कि वैज्ञानिक जानकारी से ईश्वर की सत्ता को समझने में काफ़ी सहायता मिलती है।

जब हम आज बिना किसी पूर्वाग्रह और पक्षपात की भावना के अपने-आप से पूछें कि आधुनिक विज्ञान से हमें कौन-सी आध्यात्मिक शिक्षा मिलती है (जैसे अतिलघु The Infinitcly Smallकी हमारी जानकारी या जीवन की समस्या आदि), तो हमें इस दिशा में सोचने के अनेक कारण मिल जायेंगे। जब हम जन्म और जीवन के अनुरक्षण से संबंधित संचालित असाधारण व्यवस्था के बारे में सोचते हैं, तो जैसे-जैसे इस क्षेत्र में हमारा ज्ञान बढ़ता जाता है, निश्चित रूप से स्पष्टतः इसकी सम्भावना कम से कम होती जाती है कि यह व्यवस्था मात्र संयोग का परिणाम हो। उदाहरणतः एक फ्रांसीसी ने, जिसे चिकित्सा-शास्त्र में नोबल पुरस्कार मिल चुका है, लोगों से यह बात मनवानी चाही कि जीवन-तत्व कुछ विशेष वह्य प्रभावों के कारण कुछ सामान्य रासायनिक तत्त्वों के इस्तेमाल में आने से अपने-आप ही उत्पन्न हुआ था। फिर यह दावा किया गया कि इसी मूल जीवन-तत्व से कालांतर में अवयवी जीवों, यहां तक कि असाधारण जटिल जीव, मानव का आविर्भाव हुआ है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च वर्ग के विलक्षण और अत्यन्त जटिल जीवों को समझने की दिशा में विज्ञान ने जो उन्नति की है, उससे इसके

क़ुरआन समझने के लिए बहुपक्षीय एवं विस्तृत ज्ञान की ज़रूरत है

कई शताब्दियों तक मनुष्य इस स्थिति में नहीं था कि वह क़ुरआन में उल्लिखित इन चीज़ों का अध्ययन कर सकता, क्योंकि उसके पास पर्याप्त वैज्ञानिक साधनों का अभाव था। प्राकृतिक प्रतिभासों से सम्बन्धित आयतों का विस्तृत अर्थ तो आजकल ही समझा जा सका है। मैं तो यहां तक कहूंगा कि बीसवीं शताब्दी में जबकि बढ़ती हुई जानकारियों को विभिन्न विभागों में विभक्त किया गया है, एक सामान्य वैज्ञानिक के लिए भी जब तक वह विशिष्ट शोध-कार्य का साहारा नहीं लेता, ऐसे विषयों से सम्बन्धित प्रत्येक चीज़ को समझ पाना आसान नहीं है, जिन्हें वह क़ुरआन में पढ़ता है। इसका अर्थ यह है कि क़ुरआन की ऐसी सभी आयतों को समझने के लिए किसी भी व्यक्ति के लिए व्यापक एवं बहुपक्षीय ज्ञान अभीष्ट है। इससे मेरा अभिप्राय यह है कि वह ज्ञान अनेक विषयों को अपनी परिधि में लिए हुए हो।

मैं "विज्ञान" शब्द उस ज्ञान के लिए इस्तेमाल करता हूँ, जो पूर्णतः निर्दोष तरीक़े से स्थापित हो चुका हो, इसमें वे मत एवं परिकल्पनाएं सम्मिलित नहीं हैं, जो थोड़े समय के लिए किसी प्राकृतिक प्रतिभास या प्राकृतिक दृश्य घटनाओं की किसी श्रृंखला का कारण बताने में सहायक बनती हैं, जिन्हें बाद में उन नवीन धारणाओं

के पक्ष में त्यागना पड़ता है, जो वैज्ञानिक प्रगति के कारण अधिक युक्तियुक्त और समादृत प्रतीत होती हैं। मूल रूप से मैं क़ुरआन के वक्तव्यों और उस उपलब्ध ज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना चाहता हूँ, जिस पर बाद में किसी वाद-विवाद के खड़े होने की सम्भावना नहीं मालूम होती। जहां-कहीं मैं ऐसे वैज्ञानिक तथ्यों को पेश करूंगा, जो अभी शत-प्रतिशत सिद्ध एवं स्थपित नहीं हो सके हैं, वहां इस चीज़ को मैं अवश्य ही स्पष्ट कर दूंगा।

क़ुरआन में कुछ ऐसे असाधारण वक्तव्य भी हैं, जिनकी आधुनिक विज्ञान द्वारा अभी तक पुष्टि नहीं हो सकी है। मैं उनके बारे में कहूँगा कि सारे ही प्रमाण वैज्ञानिकों का जो मार्ग-दर्शन करते हैं, वह यही है कि वे यह मानें कि ये वक्तव्य अत्याधिक सम्भावित हैं। इस सिलसिले का एक उदाहरण यह है कि क़ुरआन का बयान है कि जीवन जलीय उद्‌भव है। दूसरा यह कि ब्रह्माण्ड में कहीं हमारी पृथ्वी के सदृश ग्रह मौजूद हैं।

इन वैज्ञानिक विचारों के कारण हम यह कदापि न भूलें कि क़ुरआन एक उत्कृष्ट धार्मिक-ग्रन्थ है और स्वाभाविक है कि उससे यह उम्मीद नहीं की जा सकती है कि उसका उद्देश्य विज्ञान से सम्बद्ध होगा। जहां कहीं भी रचना-कार्यों और प्राकृतिक सुस्पष्ट दृष्टिगोचर चीज़ों पर विचार करने के लिए मनुष्य को आमन्त्रित किया गया है, वहां ऐसे उदाहरणों का उद्देश्य केवल दैवी सर्वव्यापकता पर बल देना है। ये तथ्य कि इन विचारों एवं चिंतनों के द्वारा हमें उस सामग्री का संकेत मिल सकता है, जिसका संबंध वैज्ञानिक जानकारी से है, वास्तव में एक और ईश्वरीय उपहार है, जिसके मूल एवं महत्वों को ऐसे युग में अवश्य ही प्रकाशमान होना चाहिए, जिसमें विज्ञान का सहारा लेकर भौतिकवादी नास्तिकता इस प्रयास में है कि ईश्वर में जो आस्था पायी जाती है, उसकी बलि देकर अपना शासन और नियन्त्रण स्थापित कर सके।

अपने अनुसंधान की पूरी अवधि में मैंने निरन्तर निष्पक्ष रहने का प्रयास किया है। मेरा विश्वास है कि उस निष्पक्ष भाव से क़ुरआन का अध्ययन करने में मैं कामियाब हो सका हूँ, जिस निष्पक्ष भाव से एक डाक्टर किसी मरीज़ की फ़ाइल खोलता है। दूसरे शब्दों में तमाम लक्षणों का सावधानी के साथ निरीक्षण करके वह निदान निरूपण कर पाता है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि वास्तव में यह इस्लाम में आस्था नहीं थी, जिसने आरम्भ में मेरा मार्ग-दर्शन किया हो, बल्कि यह केवल सच्चाई की सीधी-सादी खोज थी। आज मुझे ऐसा ही प्रतीत होता है, यही वह मुख्य तथ्य था, जिसने मेरा मार्ग- दर्शन किया और अध्ययन की समाप्ति पर मुझे यह अनुभव कराया कि कुरआन एक पैग़म्बर पर अवतरित ईश्वरीय वाणी है।

हम क़ुरआन के उन वक्तव्यों का परीक्षण करेंगे, जिसमें विशेष रूप से वैज्ञानिक तथ्य दर्ज हैं, किन्तु पहले समय के लोग उनके केवल ऊपरी अर्थ ही समझने की स्थिति में थे। यह कल्पना कैसे की जा सकती है कि क़ुरआन में कोई परिवर्तन हुआ है। यदि हुआ है तो ये गूढ़ अर्थी अंश जो कुरआन में बिखरे पड़े हैं, मनुष्य की छल-योजना से बच कैसे गये? पाठ में मामूलीसी तब्दीली भी उनकी उस बिलक्षण सुसंगति को स्वतः भंग कर देती जो उनकी अपनी विशिष्टता है और हम आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से उनकी पुष्टि करने में असमर्थ रहते।

इन वक्तव्यों का पूरे कुरआन में पाया जाना ही एक निष्पक्ष व्यक्ति के लिए कुरआन की प्रामाणिकता का स्पष्ट चिन्ह है। कुरआन एक ऐसा शिक्षा-प्रसारण है, जिसका परिचय यथाक्रम अवतरण और प्रकाशना (Revelation) के माध्यम से मानव को प्राप्त हुआ और मोटे तौर से इसमें बीस वर्ष का समय लगा, जो हिजरत के पहले और बाद की दो समान कालावधि को व्याप्त है। इस दृष्टि से यह स्वाभाविक ही था कि विचार एवं मनन हेतु वैज्ञानिक विचार पूरे ग्रन्थ में बिखेरा जाता। ऐसे अध्ययन के लिए जैसा कि हम करना चाहते थे, हमने एक-एक सूरः से उन्हें जमा करके विषयानुसार उनका वर्गीकरण

किया है।

उनको कैसे वर्गीकृत किया जाए? इस सम्बन्ध में किसी विशेष प्रकार के वर्गीकरण के सुझाव का संकेत हमें कुरआन में नहीं मिल सका। अतः मैंने यह फ़ैसला किया कि उन्हें मैं अपने तौर पर प्रस्तुत करूं।

मेरे हिसाब से सबसे पहले सृष्टि के विषय को लेना उचित रहेगा। इस विषय से सम्बन्ध रखने वाली आयतों और ब्रह्माण्ड-रचना के सम्बन्ध में आज के प्रचलित विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। दूसरे यह कि हमने आयतों को इन सामान्य शीर्षकों के अन्तर्गत विभक्त किया है: खगोल-विज्ञान, पृथ्वी, जीव-जन्तु तथा वनस्पति जगत, मानव, विशेषतः प्रजनन-प्रक्रिया। अन्तिम विषय को कुरआन ने एक महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उक्त सामान्य शीर्षकों को तदाधिक उपशीर्षकों के अन्तार्गत भी रख सकते हैं।

फिर मेरे विचार में यह उपयोगी रहेगा कि आधुनिक विज्ञान के दृष्टिकोण के प्रकाश में कुरआन और बाइबिल के वर्णनों एव वक्तव्यों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये।

ब्रह्माण्ड की सृष्टि

आइए पहले हम सृष्टि के सम्बन्ध में कुरआन के वर्णन एवं वक्तव्य का अवलोकन करें।

इस सिलसिले में हमारे समक्ष एक महत्वपूर्ण सामान्य बात यह उभर कर आती है कि यह वक्तव्य बाइबिल के बयान से भिन्न है। यह बात उन कथित समानताओं के विरुद्ध है, जिन्हें साधरणतया पाश्चात्य लेखक गलत तौर से केवल इसलिए सामने रखते हैं, ताकि वे दोनों ग्रन्थों में समरूपता सिद्ध कर सकें।

पश्चिम की यह दृढ़ प्रवृत्ति है कि अन्य विषयों की तरह सृष्टि के सम्बन्ध में भी बात करते हुए दावा किया जाता है कि मुहम्मद ने बाइबिल के सामान्य खाके की केवल नकल की है। निरसंदेह बाइबिल

में वर्णित सृष्टि के छः दिन और तदाधिक एक अतिरिक्त सातवां दिन, जो ईश्वर के आराम का दिन माना गया है, उसकी तुलना कुरआन की सूरः अल-आराफ़ (7:54) की एक आयत से की जा सकती है:

إِنَّ رَبَّكُمُ اللَّهُ الَّذِي خَلَقَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ فِي سِتَّةِ أَيَّامٍ

"तुम्हारा प्रभु अल्लाह है, जिसने धरती और आकाशों को छः दिन में बनाया।"

हमें यह स्पष्ट करना होगा कि "ऐयाम", जिसका एक अर्थ दिन भी है, आधुनिक टीकाकारों की दृष्टि में इससे अभिप्रेत "लम्बी अवधि" है न कि चौबीस घण्टे का समय।

जो बात मुझे मूलभूत महत्व की लगती है, वह यह है कि बाइबिल के विपरीत कुरआन में पृथ्वी और आकाश की सृष्टि का कोई क्रम नहीं दिया गया है। कुरआन जब सामान्य रूप से सृष्टि का उल्लेख करता है तो कभी आकाश से पहले पृथ्वी का वर्णन करता है, तो कभी पृथ्वी से पहले आकाश का, जैसे सूरः ताहा (20:4) में है:

تَنزِيلًا مِّمَّنْ خَلَقَ الْأَرْضَ وَالسَّمَاوَاتِ الْعُلَى

"अवतरण है उसकी ओर से, जिसने पैदा किया धरती और ऊंचे आकाश को।"

निश्चय ही कुरआन के वर्णन से ऐसा आभास मिलता है कि धरती और आकाश का विकास साथ-साथ हुआ है। इसमें कुछ ऐसे निर्द्वन्द्व मौलिक आंकड़े भी पाये जाते हैं, जिनका सम्बन्ध आरम्भिक गैसीय शशि (दुख़ान) से है, जो अद्वितीय (Unique) है, जिसके तत्व पहले परस्पर मिले हुए थे (रत्क़) और बाद में अलग-अलग (फ़त्क़) हो गये। यह धारणा सूरः हा० मीम० अस्-सज्दा (41:11) में व्यक्त है:

ثُمَّ اسْتَوٰٓى اِلَى السَّمَآءِ وَهِيَ دُخَانٌ

"खुदा ने आकाश की ओर मुख किया जबकि वह धुआं ही धुआं था।"

यह बात एक अन्य सूरः अल-अंबिया (21 : 30) में भी व्यक्त की गयी है:

اَوَلَمْ يَرَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اَنَّ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ كَانَتَا رَتْقًا فَفَتَقْنٰهُمَا ؕ

"क्या काफिर यह नहीं जानते कि धरती और आकाश पहले परस्पर मिले हुए थे और फिर हमने उन्हें अलग-अलग कर दिया?"

अलगाव की इस प्रक्रिया से कई दुनियाएं मूर्तिमान हुः यह बात कुरआन में दर्जनों बार आयी है। एक बार तो यह सूरः अल्-फातिहा (1 : 1) के प्रथम अनुवाक्य के रूप में ही आयी है:

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۙ

"प्रशंसा ईश्वर के लिए है, जो सारे संसार का रब (पालन-कर्त्ता प्रभु) है।"

ये सब बातें आधुनिक धारणाओं से पूर्णतः मेल खाती हैं कि किस प्रकार आरम्भ में कोहरेदार अस्तित्व पाया जाता था और फिर किस प्रक्रिया के अन्तर्गत वे तत्व अलग-अलग हुए, जिनसे प्रारम्भिक पुंज बना था। इसी अलगाव ने नीहारिकाओं को जन्म दिया और जब इनके विभाजन से तारे बने, तो उन्हीं से बाद में ग्रहों ने जन्म लिया।

कुरआन में सूरः अल्-फ़ुर्कान (25 : 59) में आकाश और धरती के मध्य एक बीच की अन्य सृष्टि के बारे में कहा गया है:

اَلَّذِىْ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا فِىْ سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى

الْعَرْشِ ۚ الرَّحْمَٰنُ فَاسْأَلْ بِهِ خَبِيرًا

"जिसने आकाशों और धरती को और जो कुछ उनके बीच है, छः दिनों में पैदा किया।"

ऐसा लगता है कि "बीच की यह सृष्टि" संगठित खगोलीय-प्रणाली के बाहर आधुनिक खोज द्वारा पाये गये पदार्थ-सेतु के बारे में है।

इस सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि आधुनिक आंकड़े और क़ुरआन के बयानों में बहुत से बिन्दुओं पर मतैक्य पाया जाता है। इस तरह हम बाइबिल के नितांत अमान्य बयानों से कहीं आगे आ गये हैं। ख़ासतौर पर बाइबिल का यह कहना कि पृथ्वी की सृष्टि आकाश से पहले हुई, अर्थात तीसरे दिन, आकाश की बाद में हुई, अर्थात चौथे दिन। हालांकि यह ज्ञात तथ्य है कि हमारा ग्रह अपने नक्षत्र सूर्य से उत्पन्न हुआ है। ऐसी स्थिति में हम यह कैसे सोच सकते हैं कि क़ुरआन का लेखक कोई ऐसा मनुष्य है, जिसने बाइबिल से प्रेरणा ली हो और अपने तौर पर बाइबिल के सृष्टि-सम्बन्धी कथन को संशोधित करके उसे ऐसी सामान्य धारणा के रूप में पेश किया, जिसकी खोज उसकी मृत्यु के कई शताब्दी बाद हो सकी।

खगोल-विज्ञान – प्रकाश और गति

अब हम खगोल-विज्ञान को लें।

जब मैं क़ुरआन में वर्णित खगोल-विज्ञान सम्बन्धी विवरण पाश्चात्य जगत के लोगों के समक्ष रखता हूँ, तो प्रायः कुछ लोग कह देते हैं कि यह कोई ख़ास बात नहीं, क्योंकि अरबों ने इस दिशा में यूरोप वालों से पहले काफ़ी महत्वपूर्ण खोज कर ली थी।

यह वास्तव में बड़ी ही ग़लत धारणा है, जो इतिहास से अनभिज्ञ होने के कारण उत्पन्न हुई है। पहली बात तो यह कि अरब में विज्ञान का विकास क़ुरआन के अवतरित होने के बाद हुआ। दूसरी बात यह कि इस्लामी सभ्यता के शिखर पर जो विज्ञान प्रचलित था, उसके द्वारा किसी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं था कि वह आकाश के बारे में ऐसी सही और सटीक बातें लिख सके, जैसी कि क़ुरआन में मौजूद हैं।

यहां भी विषय इतना विस्तृत है कि मैं इस सम्बन्ध में एक रूप-रेखा ही प्रस्तुत कर सकता हूँ।

सूर्य और चांद के बारे में बाइबिल का बयान है कि वे दोनों प्रकाशमय हैं, यद्यपि उनके आकार भिन्न हैं। क़ुरआन विभिन्न गुणसूचक नामों द्वारा उनमें अन्तर व्यक्त करता है। वह "नूर" (प्रकाश) शब्द चाँद के लिए और "सिराज" (चिराग़) सूर्य के लिए प्रयुक्त करता है। पहला निष्क्रिय पिंड है, जो केवल प्रकाश को परिवर्तित (Reflect) करता है, दूसरा ऐसा खगोलीय पिंड है जो सतत सुदास्य उत्तेजनशील और प्रकाश एवं गर्मी का स्रोत है।

"नज्म" (तारा) शब्द एक और शब्द "साक़िब" से जुड़ा हुआ है, जो ज़ाहिर करता है कि वह जलता और रात की छाया (अन्धकार) को चीरता हुआ अपने-आपको समाप्त करता है।

क़ुरआन में 'कौकब' से निश्चय ही ऐसे आकाशीय पिंड अभिप्रेत मालूम होते हैं, जो प्रकाश को परिवर्तित (Reflect) करते हैं, न कि सूर्य की तरह स्वयं प्रकाश उत्पन्न करते हैं।

आज हम भली प्रकार जानते हैं कि आकाशीय संगठन अत्यंत सन्तुलित है। तारों का अपना निश्चित पथ है, उनके आकार; भार और नियत गति के अनुसार उनके गुरुत्वाकर्षण का अपना प्रभाव है। इसी सब पर आकाशीय सन्तुलन निर्भर करता है। इस तथ्य की जानकारी सही रूप में हमारे अपने युग में प्राप्त हो सकी है। क़ुरआन आज की परिभाषा में नहीं, बल्कि अपने ढंग से इस सन्तुलन के आधार का उल्लेख करता है :

وَهُوَ الَّذِيْ خَلَقَ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ ؕ
كُلٌّ فِيْ فَلَكٍ يَّسْبَحُوْنَ ۝

"और वही है जिसने रात और दिन बनाए, और सूर्य और चन्द्रमा। सब तैर रहे हैं, प्रत्येक एक-एक मण्डल में।" (21 : 33)

इस गति को व्यक्त करने के लिए जो अरबी शब्द आया है, वह 'सबहा' (मूल में यसबहून) है। इससे चलने वाली किसी भी वस्तु की गति का आभास होता है। फिर यह चाहे ज़मीन पर किसी के दौड़ने से टांगों की गति हो या जल में तैरने से पैदा होने वाली हरकत। नक्षत्रों के लिए इसका यही असली अर्थ लेने पर आदमी बाध्य है; अर्थात् किसी का अपनी गति से चलना।

रात और दिन के लगातार एक-दूसरे के बाद आने का वर्णन मामूली लगता, यदि इसकी अभिव्यक्ति क़ुरआन में ऐसे शब्दों में न की गयी होती, जो आधुनिक वैज्ञानिक युग में महत्वपूर्ण है।

क़ुरआन में सूरा अज़्-ज़ुमर (39 : 5) में इसके लिए 'कव्वरा'

क्रिया का उपयोग यह बताने के लिए किया गया है कि रात दिन को लपेटती है और दिन रात को। ऐसा ठीक उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार पगड़ी सिर के गिर्द बांधी जाती है। यही इस शब्द का मौलिक अर्थ भी है। यह समरूपता अत्यन्त सही है, हालांकि जिस समय क़ुरआन अवतरित हुआ है, उस समय वे खगोलीय आंकड़े ज्ञात नहीं थे, समरूपता लाने के लिए जिनकी जानकारी अनिवार्य थी।

विभिन्न आकाशों के विकास और सूर्य के नियत एक स्थान की धारणा का भी क़ुरआन में उल्लेख किया गया है। ये ऐसी चीज़ें हैं, जो अत्यन्त व्यापक आधुनिक धारणा से मेल खाती और उनके समर्थन में हैं। ऐसा लगता है कि क़ुरआन इस ओर भी संकेत करता है कि ब्रह्माण्ड फैलता जा रहा है।

अन्तरिक्ष पर विजय पाने का उल्लेख भी क़ुरआन में मिलता है। तकनीकी ज्ञान में प्रगति के कारण अब यह सम्भव हो गया है, जिसके फलस्वरूप मनुष्य ने चाँद तक की यात्रा पूरी भी कर ली। सूरा रहमान (55 : 33) पढ़ते ही यह विचार हमारे सामने कौंध जाता है :

يٰمَعْشَرَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ اِنِ اسْتَطَعْتُمْ اَنْ تَنْفُذُوْا مِنْ اَقْطَارِ
السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ فَانْفُذُوْا ۗ لَا تَنْفُذُوْنَ اِلَّا بِسُلْطٰنٍ ۝

"हे गिरोह मनुष्य और जिन्न के! यदि तुममें सामर्थ्य हो कि आकाश और धरती की सीमाओं से बाहर निकल जाओ तो निकलो। तुम बिना (हमारी) शक्ति के नहीं निकल सकते।"

यह शक्ति सर्वशक्तिमान ईश्वर से मिलती है और इस पूरी सूरा का विषय ही मनुष्य को यह निमन्त्रण देना है कि मनुष्य के प्रति ईश्वर की जो दयालुता है वह उसे पहचाने और स्वीकार करे।

पृथ्वी

अब पृथ्वी की ओर पलटें। उदाहरणार्थ सूरा अज़-ज़ुमर (39 : 21) को लीजिए:

أَلَمْ تَرَ أَنَّ اللَّهَ أَنزَلَ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً فَسَلَكَهُ يَنَابِيعَ فِي الْأَرْضِ ثُمَّ يُخْرِجُ بِهِ زَرْعًا مُّخْتَلِفًا أَلْوَانُهُ

"क्या तुम ने नहीं देखा कि ईश्वर ने आकाश से पानी बरसाया, फिर धरती में उसकी धाराएं चलायीं? फिर उसके द्वारा विभिन्न रंग की खेती निकालता है।"

आज ये बातें हमें बिल्कुल प्राकृतिक लगती हैं, पर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पहले ये बातें ज्ञात नहीं थीं। सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ होने तक बर्नार्ड पैलिसी (Bernard Palissy) ने जल-चक्र के बारे में हमें सुसंगत जानकारी दी। इसके पहले लोगों का यह विचार था कि समुद्र का पानी हवा के प्रभाव से महादेशों के भीतरी भाग तक घुस जाता है, जो बाद में रसातल से होता हुआ वापस समुद्र में पहुंच जाता है। इन गर्त्तों को प्लेटो ही के समय से टारटारस (Tartarus) कहा जाता रहा है। सत्तरहवीं शताब्दी में डेसकारटस (Descartes) जैसे महान विचारक भी इसमें विश्वास करते थे। यहां तक कि उन्नीसवीं शताब्दी में भी अरस्तू के इस विचार की चर्चा थी कि पानी पहाड़ी की बर्फ़ीली गुफ़ाओं में जम जाता है और भूमिगत झीलों का रूप धारण करता है, और यहीं से जल स्रोतों को पानी मिलता है। आज हम जानते हैं कि यह सब बारिश के जल के निस्पन्दन (Filtration) के कारण होता है। यदि कोई आधुनिक जलविज्ञान के सिद्धान्तों की तुलना इस विषय पर पायी जाने वाली क़ुरआन की आयतों से करे, तो वह दोनों में ध्यान देने योग्य समताएं पायेगा।

भूगर्भ विज्ञान के अन्तर्गत वह तथ्य जिसे प्रतिभास परत कहा

जाता है, जो पर्वत मालाओं के बनने का कारण सिद्ध हुई हैं। यही भूपृष्ठ के बारे में सही है, जो एक ठोस ख़ोल की तरह है, जिस पर हम रह सकते हैं, जबकि अन्दर की तहें गर्म और तरल हैं। और इसी लिए यह भी ज्ञात है कि पर्वतों के स्थायित्व का सम्बन्ध इन्हीं परतों की संवृति से है, क्योंकि ये परतें थीं, जिनके उभार ही पर्वतों के बनने के आधार सिद्ध हुए।

अब इन आधुनिक धारणाओं की तुलना इस विषय पर क़ुरआन में पायी जाने वाली बहुत-सी आयतों में से एक आयत से करें। यह आयत सूरा अन-नबा (78 : 6-7) से ली गयी है:

أَلَمْ نَجْعَلِ الْأَرْضَ مِهَادًا ۝ وَالْجِبَالَ أَوْتَادًا ۝

"क्या हमने पृथ्वी को बिछौना और पर्वतों को मेख़ नहीं बनाया।"

मेख़ (अवताद) तम्बू को मज़बूती से बांधने के लिए ज़मीन में गाढ़े जाते हैं, जिसका भूगर्भीय अर्थ परत की गहरी नींव से लिया जा सकता है।

यहां भी अन्य विषयों की तरह निष्पक्ष परीक्षक को यह ज़रूर महसूस होगा कि इस कथन और आधुनिक ज्ञान में कोई टकराव नहीं है।

मगर सबसे अधिक और सबसे पहले मैं क़ुरआन में जीवन्त वस्तुओं–प्राणी और वनस्पति, दोनों–विशेषकर उनके सन्तानोत्पत्ति के बारे में पाये जाने वाले वक्तव्यों पर हैरान रह गया।

मुझे पुनः इस बात पर ज़ोर देना होगा कि यह आधुनिक युग ही है, जिसमें वैज्ञानिक प्रगति ने इस प्रकार की अनेक आयतों के विषय को हमार लिए अधिक बोध गम्य और व्यापक बना दिया है। और भी बहुत सी ऐसी आयतें हैं, जो अब बहुत अधिक आसानी से समझी जा सकती हैं, मगर जिन में जीव वैज्ञानिक अर्थ नीहित हैं, वे अत्याधिक

महत्त्वपूर्ण हैं। इस सिलसिले में सूरा "अल-अम्बीया" का उदाहरण दिया जा सकता है। इस का एक अंश पहले ही उद्घृत किया जा चुका है।

وَجَعَلْنَا مِنَ الْمَآءِ كُلَّ شَيْءٍ حَيٍّ ۖ أَفَلَا يُؤْمِنُونَ ۝

> "क्या कुफ़्र करने वाले यह नहीं समझते कि आकाश और पृथ्वी परस्पर मिले हुए थे, फिर हमने उन्हें अलग-अलग किया और हमने पानी से हर जानदार चीज़ बनायी। तो क्या वे विश्वास नहीं करेंगे? (21:30)

यह इस आधुनिक धारणा की पुष्टि है कि जीवन का मूल उद्भव जलीय है।

मुहम्मद (सल्ल०) के समय में वनस्पति-शास्त्र की प्रगति किसी भी देश में इतना आगे बढ़ी हुई न थी कि इस नियम को मान्यता मिल सकती कि पौधों में नर और मादा दोनों होते हैं। फिर भी 'ताहा' (20:53) में हम पढ़ सकते हैं:

ٱلَّذِى جَعَلَ لَكُمُ ٱلْأَرْضَ مَهْدًا وَسَلَكَ لَكُمْ فِيهَا سُبُلًا وَأَنزَلَ مِنَ
ٱلسَّمَآءِ مَآءً فَأَخْرَجْنَا بِهِۦٓ أَزْوَٰجًا مِّن نَّبَاتٍ شَتَّىٰ ۝

> "वही है जिसने तुम्हारे लिए धरती को बिछौना बनाया और उसमें तुम्हारे लिए रास्ते जारी किए और आकाश से पानी बरसाया, फिर उसके द्वारा हमने पौधों के जोड़े पैदा किए, एक दूसरे से अलग।"

आज हमें मालूम है कि फल पेड़-पौधों से प्राप्त होते हैं। जिनकी अपनी लैंगिक विशिष्टता होती है। सूरः अर-रअद (13:3) में हम पढ़ते हैं:

وَمِن كُلِّ ٱلثَّمَرَٰتِ جَعَلَ فِيهَا زَوْجَيْنِ ٱثْنَيْنِ ۖ يُغْشِى ٱلَّيْلَ ٱلنَّهَارَ ۚ

"और हर प्रकार की पैदावार (फलों) की दो-दो किस्में (नर-मादा) बनायीं। वही रात को दिन से छिपाता है। निस्सन्देह इसमें उन लोगों के लिए बड़ी निशानियां हैं जो सोच-विचार करते हैं।"

प्राणी जगत में सन्तानोत्पत्ति के विचार मानव-सन्तानोत्पत्ति से जुड़े थे। अब हम इनका अध्ययन करते हैं। शरीर-विज्ञान से सम्बन्धित एक आयत ऐसी है, जो मेरी दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। रक्त-संचार की खोज से एक हज़ार वर्ष पहले, इस तथ्य की खोज से लगभग तेरह सौ साल पहले की पाचन-क्रिया से अवयवों को पोषण मिलने के लिए अंतड़ियों में क्या क्रिया होती है, कुरआन में इन्हीं सिद्धान्तों के अनुरूप दूध बनने के स्रोत का उल्लेख किया गया है।

इस आयत को समझने के लिए हमें यह जानना होगा कि रासायनिक प्रक्रिया अंतड़ियों में घटित होती है और वहां से भोज्य पदार्थ से जो तत्त्व खींच कर निकाले जाते हैं, वे रक्त धारा में जा पहुंचते हैं। और ये सब कार्य एक जटिल विधि द्वारा होता है। कभी-कभी जिगर के रास्ते से भी यह काम होता है, यह वास्तव में उनकी रासायनिक रचना पर निर्भर करता है। रक्त उन्हें शरीर के सभी अंगों तक पहुंचाता है, जिनमें स्तनी ग्रन्थियां भी शामिल हैं।

विस्तार में न जाकर हम यह कह सकते हैं कि अंतड़ियों में से कुछ पदार्थ अंतड़ी की दीवार के कोष्ठकों में आते हैं तथा उनका परिवहन रक्तधारा द्वारा होता है।

इस बात के महत्त्व को हम पूर्ण रूप से समझ सकते हैं, यदि हम कुरआन की सूरा अन-नह्ल की इस आयत (16:66) को समझ सके हैं।

وَاِنَّ لَكُمْ فِى الْاَنْعَامِ لَعِبْرَةً ؕ نُسْقِيْكُمْ مِّمَّا فِىْ بُطُوْنِهٖ مِنْۢ بَيْنِ
فَرْثٍ وَّدَمٍ لَّبَنًا خَالِصًا سَآئِغًا لِّلشّٰرِبِيْنَ ۝

"और निस्सन्देह तुम्हारे लिए पशुओं में भी एक शिक्षा-सामग्री है। जो कुछ उनके पेट में है, उसमें से, जो कुछ अंतड़ियों में होता है, उसके और रक्त के बीच में से, हम तुम्हें शुद्ध दूध पिलाते हैं, जो पीने वालों के लिए अत्यन्त सुखकर है।"

मानव-सृजन

मानव-प्रजनन के विषय में कुरआन के वक्तव्य भ्रूण-विज्ञान के विशेषज्ञों के लिए चुनौती हैं, जो उनके समझने में लगे हुए हैं। ऐसे वक्तव्यों को समझने योग्य मनुष्य उसके पश्चात् हो सका हैं, जबकि मौलिक विज्ञानों ने जन्म लिया। ये विज्ञान-प्राणी विज्ञान के समझने में काफ़ी सहायक हुए हैं, विशेष रूप से सूक्ष्मदर्शी यन्त्र के आविष्कार के बाद। सातवीं शताब्दी के प्रारम्भिक समय में रहने वाले मनुष्य के लिए ऐसे विचार व्यक्त करना असम्भव था। ऐसा कोई आधार नहीं, जिससे ऐसा कोई संकेत मिलता हो कि उस समय मध्य पूर्व और अरब को इस विषय में उन लोगों से जो यूरोप या अन्य स्थानों के रहने वाले थे, कुछ भी अधिक ज्ञान प्राप्त रहा हो। आज के कई मुसलमान ऐसे हैं जिन्हें प्राकृतिक विज्ञान और कुरआन दोनों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त है, वे प्रजनन के विषय में कुरआन की आयतों और आधुनिक मानव-ज्ञान के पारस्परिक साम्य की स्पष्टता स्वीकार करते हैं। मैं सऊदी अरब में पले बढ़े अठारह वर्षीय एक युवक की यह बात सदा याद रखूंगा, जो उसने कुरआन में वर्णित प्रजनन क्रिया से सम्बन्धित प्रश्न का उत्तर देते हुए कही थी। उसने इसकी ओर संकेत करते हुए कहा था कि "किन्तु यह ग्रन्थ हमें इस विषय में सारा ही तात्विक एवं सारभूत ज्ञान दे देता है। जब मैं स्कूल में था तो कुरआन के द्वारा ही मुझे समझाया गया था कि बच्चे कैसे पैदा होते हैं। आपकी काम-शिक्षा की पुस्तकें इस सिलसिले में पीछे रह गई हैं।"

इस जगह ख़ासतौर से हमें कुरआन के समय के इस विषय से

सम्बन्धित कल्पित और अंधविश्वास पूर्ण विचारों की तुलना कुरआन के अपने तथा आधुनिक विचारों से करने पर बड़ी हैरानी होती है। हम पाते हैं कि कुरआन उस समय की फैली हुई भ्रान्तियों से एकदम पाक है, तथा कुरआन के विचार आधुनिक विचारों से एकदम मेल खाते हैं।

अब ा न कुरआन की आयतों के माध्यम से वीर्य की जटिलताओं से सम्बन्धित ाटीक वि्चारों पर ध्यान दें और इस बात पर कि इसकी अत्यन्त अल्पमात्रा गर्भाधान के लिए अपेक्षित है। यह सारतत्व है, जिसे अरबी में "सुलाला" शब्द से व्यक्त किया जा सकता है।

स्त्री के जननांग में अंडे के रोपण को कई आयतों में यथोचित रूप से 'अलक़' शब्द से व्यक्त किया गया है, जो उस सूरा का नाम भी है, जिसमे यह शब्द आया है:

خَلَقَ الْإِنسَانَ مِنْ عَلَقٍ ۝

"ईश्वर ने मनुष्य को उस चीज़ से बनाया जो चिपक जाती है।" (96 : 2)

मैं नहीं समभता कि "अलक़" शब्द का सिवाए इसके अपने मौलिक अर्थ के कोई अन्य यथोचित अनुवाद हो सकता है।

भ्रूण के मां के गर्भाशय में बढ़ने के बारे में संक्षिप्त रूप में प्रकाश डाला गया है, किन्तु इस संबंध में जो कुछ कहा गया है, वह अत्यन्त विशुद्ध और सही है। क्योंकि सरल शब्दों में जो कुछ बताया गया है वह भ्रूण के विकास की मूल अवस्थाओं के यथातथ्य अनुरूप है। यह बात हमें सूरा अल-मोमिनून (23 : 14) में मिलती है।

ثُمَّ خَلَقْنَا النُّطْفَةَ عَلَقَةً فَخَلَقْنَا الْعَلَقَةَ مُضْغَةً فَخَلَقْنَا الْمُضْغَةَ عِظَامًا فَكَسَوْنَا الْعِظَامَ لَحْمًا ثُمَّ أَنشَأْنَاهُ خَلْقًا آخَرَ فَتَبَارَكَ اللَّهُ أَحْسَنُ الْخَالِقِينَ ۝

"फिर हमने उस बूंद (वीर्य) को चिपकने वाली चीज़ का

रूप दिया, फिर उस चिपकने वाली चीज़ को मांस के लोथड़े का रूप दिया तथा हमने मांस को हड्डियों में बदला, फिर उन हड्डियों पर मांस चढ़ाया। फिर उसे एक दूसरा ही सृज़न रूप देकर खड़ा किया। तो बहुत बरकत वाला है अल्लाह, सब से उत्तम सृष्टि कर्ता!'

मांस की लुग्दी (मुज़ग़ा) की परिभाषा भ्रूण के विकास के एक विशेषचरण के प्रकटन के यथातथ्य अनुरूप है।

यह ज्ञात है कि इस पुंज के भीतरी हिस्से में हड्डियां उभरती हैं और फिर उन पर मांस पेशियां चढ़ती हैं। यही मांस-पिण्ड या लोथड़े (लह्म) का अर्थ होता है।

भ्रूण एक ऐसे चरण से गुज़रता है, जिसमें कुछ भाग तो समानुपात में होते हैं, कुछ समानुपात में नहीं होते। इसी के बाद में वैयक्तिक आविर्भाव होता है। शायद सूरा अल हज्ज (22 : 5) की एक आयत का यही अर्थ है। वह आयत यह है:

فَإِنَّا خَلَقْنَٰكُم مِّن تُرَابٍ ثُمَّ مِن نُّطْفَةٍ ثُمَّ مِنْ عَلَقَةٍ ثُمَّ مِن مُّضْغَةٍ مُّخَلَّقَةٍ

"तो हमने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया, फिर वीर्य से, फिर चिपकने वाली चीज़ से, फिर मांस के लोथड़े से, जो समानुपात में होता है और समानुपात में नहीं भी होता।"

फिर हमें कुरआन में ज्ञानेन्द्रियों और अन्दरूनी अंगों के प्रसंग में सूर अस-सज्दा (32 : 9) में यह उल्लेख मिलता है:

وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْأَبْصَارَ وَالْأَفْئِدَةَ

"उसने (ईश्वर ने) तुम्हारे लिए देखने, सुनने के और अन्दर के अंगों को बनाया।"

इसमें ऐसा कुछ नहीं है, जो आधुनिक तथ्यों के विरुद्ध हो, यही

नहीं बल्कि क़ुरआन में कहीं कोई भ्रान्ति नहीं पाई जाती।

क़ुरआन और बाइबिल

अब हम अन्तिम विषय पर आ गए हैं। यह विषय है क़ुरआन के उन वर्णनों की आधुनिक विज्ञान से तुलना, जिनका उल्लेख बाइबिल में भी हुआ है।

जब हम सृष्टि की बातें कर रहे थे, तो हमें समस्या की थोड़ी सी झलक मिल ही गई थी। इससे पहले मैं कह चुका हूँ कि क़ुरआन की आयतों और आधुनिक ज्ञान में परस्पर मतैक्य पाया जाता है और यह भी बता चुका हूँ कि बाइबिल के कथनों में कुछ ऐसे वक्तव्य भी हैं, जो विज्ञान की दृष्टि में स्वीकार करने योग्य नहीं हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं रहती, जबकि हमें यह पता हो कि सृष्टि का जो विवरण बाइबिल में है, वह ईसा-पूर्व छठी शताब्दी में रहने वाले पुजारियों का कारनामा है, यहीं से "परोहिती" कथन का आविर्भाव हुआ है। यह मुख्यतः लोगों को "सब्त" धार्मिक दिवस का पालन करने को प्रेरित करने के उद्देश्य से धर्म-प्रचार की एक विशेष प्रणाली बनायी गई थी। इस विवरण की रचना एक निश्चित लक्ष्य को सामने रखकर की गई थी और जैसा कि फादर डी वावस (यरूशलम के बाइबिलिकल स्कूल के भूतपूर्व प्रधान) ने कहा है कि यह लक्ष्य प्रमुख रूप से चरित्र के लिए क़ानूनवादी था।

बाइबिल में एक और सृष्टि का अत्यन्त संक्षिप्त और पुराना (तथाकथित यहोवा का बयान) विवरण पाया जाता है, जो कि विषय को एक अलग दृष्टि से देखता है।

दोनों ही पुराने टेस्टामेंट की पहली पुस्तक उत्पत्ति (जनेसिस) से लिए गए हैं, अर्थात तौरात की पहली पुस्तक से। हज़रत मूसा (अलैहि०) को इसका रचयिता माना गया है, किन्तु आज यह जिस रूप में हमारे हाथ में है, वह कितनी ही तबदीलियों से गुज़र चुकी है।

पहली पुस्तक (जनेसिस) का परोहिती विवरण अनूठी वंशावलि के रूप में प्रसिद्ध है। यह आदम तक जाती है, जो इतनी हास्यास्पद है कि कोई इसे गम्भीरता से नहीं लेता। फिर भी ईसा की वंशावलि के विषय में इंजील उदाहरणार्थ मत्ती और लूका के लेखकों ने बात को एकदम शब्दशः वैसे ही दोहराया है। मत्ती वंशक्रम को हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम तक ले जाता है और लूका आदम तक। यह सारा लेखन वैज्ञानिक दृष्टि से अमान्य है, क्योंकि ये पृथ्वी की आयु और इसका वह समय निर्धारित करते हैं, जब पृथ्वी पर मानव का आविर्भाव हुआ। बाइबिल में वर्णित यह पृथ्वी की आयु और आदम के आविर्भाव का समय दोनों ही आधुनिक खोजों से ग़लत साबित हो चुका है। इसके विपरीत कुरआन में ऐसी कोई ग़लत बात नहीं बयान हुई है।

इससे पहले हम यह देख चुके हैं कि किस प्रकार सृष्टि की संरचना के आधुनिक विचारों और कुरआन में सामान्यतः मतैक्य पाया जाता है, जबकि बाइबिल उनकी विरोधी है। पानी का अनादिकाल से होना, नक्षत्रों के बनने से पहले ही प्रकाश का आविर्भाव, पृथ्वी के बनने से पहले रात और दिन की मौजूदगी, सृष्टि के तीसरे दिन पृथ्वी और चौथे दिन सूर्य का बनना, पांचवे दिन पक्षियों का आकाश में ज़ाहिर होना तथा उसके पीछे छठे दिन जानवरों का पृथ्वी पर आविर्भाव, ये सब बातें वैज्ञानिक दृष्टि से ग़लत सिद्ध हो चुकी हैं, और यह उस समय के अन्धविश्वासों का नतीजा है, जब कि बाइबिल लिखी गयी और इनका कोई दूसरा अर्थ भी नहीं लिया जा सकता।

बाइबिल में वर्णित वंशावलि के आधार पर यहूदी कैलेण्डर बना है, जिस का दावा है कि आज विश्व केवल 5738 साल पुराना है। ये बातें मानने योग्य नहीं। सौर-मण्डल की आयु सम्भवतः साढ़े चार अरब वर्ष है। और पृथ्वी पर मनुष्य का आविर्भाव जैसा कि आज हम जानते हैं, कुछ नहीं तो कम से कम दसों हज़ार वर्ष पूर्व हो चुका है।

इसलिए यह अत्यन्त तात्विक और ध्यान देने योग्य बात हे कि

कुरआन में आयु एवं काल के बारे में तथ्य के विरुद्ध कोई बात नहीं बयान हुई है, जबकि बाइबिल में यह चीज़ सुनिश्चित शब्दों में उल्लिखित है।

कुरआन और बाइबिल के बीच एक और महत्त्वपूर्ण बात जिसका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है, वह प्रसिद्ध जल-प्लावन की घटना है। वास्तव में बाइबिल का विवरण दो विवरणों का संयोजन है, जो घटनाओं को विभिन्न प्रकार से व्यक्त करते हैं। बाइबिल में सार्वभौमिक बाढ़ की बात कही गई है, जो हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से लगभग 300 वर्ष पहले आयी। जो कुछ हमें हज़रत इब्राहीम के बारे में ज्ञात है, उससे तो यह नतीजा निकलता है कि लगभग 21 वीं या 22 वीं शताब्दी ईसा-पूर्व एक सार्वभौमिक जल-प्रलय की घटना घटित हुई थी। मगर ऐतिहासिक तथ्यों की दृष्टि से यह सही सिद्ध नहीं होता।

हम यह कैसे स्वीकार कर सकते हैं कि इक्कीसवीं या बाइसवीं शताब्दी ईसा-पूर्व में सारी सभ्यताएं एक सार्वभौमिक जल-प्लावन के द्वारा मिट गई थीं, जबकि हम उदाहरण स्वरूप जानते हैं कि वह मिस्र में मध्यवर्ती राज्य-काल का समय था। ये लगभग ग्यारहवें राजवंश के शासन काल के पूर्व का प्रथम मध्यवर्ती काल था।

ऐसी कोई प्रचलित बात आधुनिक ज्ञान के अनुकूल नहीं है।

इस दृष्टिकोण से हम उस बड़े अन्तर का अनुमान कर सकते हैं, जो बाइबिल को कुरआन से पृथक कर देता है। बाइबिल के विपरीत कुरआन मे वर्णित बाढ़ केवल नूह (अलै०) के लोगों तक ही सीमित थी। उन लोगों को यह सज़ा अन्य अधार्मिक लोगों की तरह मिली थी। कुरआन बाढ़ के निश्चित समय का उल्लेख नहीं करता, इसलिए कुरआन के वर्णन पर ऐतिहासिक, या पुरातत्त्वीय कोई भी आक्षेप नहीं किया जा सकता।

तुलना का तीसरा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बिन्दु हज़रत मूसा (अलै०) की कहानी है, विशेष रूप से इसका यह भाग जो उन यहूदियों के, जिनको फ़िरऔन ने अपना गुलाम बना रखा था, प्रस्थान करने से संबंध रखता है।

यहां मैं इस विषय के अध्ययन का अत्यन्त संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करूंगा, जिसका उल्लेख मेरी पुस्तक में हुआ है। मैंने उन बिन्दुओं को मालूम किया है, जहां बाइबिल और कुरआन के बयान में परस्पर मतैक्य पाया जाता है, या मतैक्य नहीं पाया जाता। उदाहरणार्थ मुझे वे स्थल मिले हैं, जहां दोनों ग्रन्थ एक दूसरे के अत्यन्त उपयोगी रूप में पूरक का कार्य करते हैं। मिस्र के फ़िरऔनों के इतिहास में यहूदियों के प्रस्थान से सम्बन्धित स्थिति के विषय में जो बहुत सी परिकल्पनाएं पाई जाती हैं, उन्हें देखते हुए मैं इस नतीज़े पर पहुंचा हूँ कि ज़्यादा सही विचार यह है कि निर्गमन की घटना मेर निपटाह रमेसिस द्वितीय (Merneptah Remeses) उत्तराधिकारी के समय की है। धर्म-पुस्तकों मे वर्णित तथ्य और पुरातत्वीय प्रमाण इस विचार की पूर्ण रूप से पुष्टि करते हैं। इससे मुझे अत्यन्त हर्ष है कि मैं यह कहने की स्थिति में हूँ कि बाइबिल के दिए हुए प्रमाण हमारे लिए फ़िरऔनियों के इतिहास में मूसा (अलै०) की अवस्थिति को निश्चित करने में बहुत ही सहायक सिद्ध हुए हैं। हज़रत मूसा (अलै०) रमेसिस द्वितीय के शासनकाल में पैदा हुए थे। बाइबिल के ये तथ्य मूसा (अलै०) की कहानी में ऐतिहासिक महत्त्व रखते हैं।

फिर मेर निपटाह के सुरक्षित शव की डाक्टरी जांच से उसकी मृत्यु के संभावित कारणों की उपयोगी जानकारी प्राप्त करने में सहायत मिली है।

आज इस फ़िरऔन का मृत शरीर हमें प्राप्त है। इसे 1898 में खोजा गया है। यह एक बहुत ही महत्वूर्ण बात है। बाइबिल यह कहती है कि वह समुद्र में डूब गया था, परन्तु लाश का क्या हुआ, इस बारे में

वह कुछ नहीं बताती। कुरआन सूरा यूनुस (10 : 92) में कहता है कि फ़िरऔन, जो तबाह हुआ, उसका शरीर पानी से सुरक्षित कर लिया गया।

فَالْيَوْمَ نُنَجِّيْكَ بِبَدَنِكَ لِتَكُوْنَ لِمَنْ خَلْفَكَ اٰيَةً ۚ وَاِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ النَّاسِ عَنْ اٰيٰتِنَا لَغٰفِلُوْنَ ۝

"आज के दिन हम तेरे (मृत) शरीर को बचाते हैं ताकि तू अपने बाद वालों के लिए एक निशानी हो।"

इस शव की डाक्टरी जांच से यह बात सामने आई है कि यह पानी में बहुत देर तक नहीं रहा, क्योंकि देर तक डूबे रहने से शरीर विकृत हो जाता है, लेकिन विकार का उसमें कोई निशानं नहीं है।

यहां भी आधुनिक तथ्य के आधार पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कुरआन के बयान पर मामूली आक्षेप की भी गुंजाइश नहीं पाई जाती।

ओल्ड टेस्टामेंट साहित्यिक रचनाओं का संकलन हैं, जो लगभग नौ शताब्दियों में पूरा हुआ; फिर इसमें कितनी ही अदलाबदली हो चुकी है। बाइबिल की मूल रचना में मनुष्य का बहुत कुछ हाथ रहा है, यह बात ध्यान देने योग्य है।

कुरआन के अवतरण का इतिहास मूलतः इससे अलग है। जिस क्षण ये मनुष्य को पहले पहल मिला, इसे कंठ कर लिया गया और स्वयं हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) के जीवन क़ाल ही में इसे लिख लिया गया। अतः कुरआन के सामने उसकी अपनी प्रमाणिकता के विषय में सिरे से कोई समस्या खड़ी ही नहीं होती।

आधुनिक ज्ञान के प्रकाश में कुरआन का निष्पक्ष होकर अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि दोनों में परस्पर मतैक्य पाया जाता है, जैसा पहले कई बार इसका ज़िक्र किया जा चुका है। इस कारण यह सम्भव ही नहीं कि हम यह सोच सकें कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०)

के समय का कोई मनुष्य अपने समय के ज्ञान के आधार पर ऐसे वक्तव्यों का रचयिता हो सकता है। आधुनिक जानकारी तो उस समय उपलब्ध ही न थी।

इन सब कारणों से कुरआन का अपना एक बेजोड़ **(Unique)** स्थान बन जाता है, और एक निष्पक्ष वैज्ञानिक यह स्वीकार करने पर मजबूर है कि वह इसका कोई शुद्ध भौतिकवादी कारण एवं आधार प्रस्तुत करने में असमर्थ है।

"वह्य" (Revelation) की रोशनी

परिचय

जीवन क्या है?

जगत में मनुष्य का अस्तित्व तथा इस सम्पूर्ण विश्व की सृष्टि अप्रत्याशित घटना मात्र या प्राकृतिक वरदान का फल है। इस सारी सृष्टि का एक-एक कण हमें एक प्यारे, दयालु एवं सर्वशक्तिमान स्रष्टा का आभास कराता है। स्रष्टा एवं कर्त्ता के बिना किसी चीज़ का होना सम्भव नहीं। प्रत्येक आत्मा जानती है कि वह मौजूद है और उसका अस्तित्व एक स्रष्टा पर निर्भर करता है। वह यह भी जानती है कि वह स्वयं को पैदा नहीं कर सकती। अतः उसका यह कर्तव्य होता है कि वह अपने स्वामी स्रष्टा ईश्वर को जाने।

मानव जाति

मनुष्य एक अद्वितीय जीव है। ईश्वर ने आदमी को अपने प्रतिनिधि के रूप में अन्य सभी स्रष्ट वस्तुओं एवं जीवों पर शासन करने और उनका प्रबन्ध करने के लिए प्रतिष्ठित किया। मानव विवेक एवं बुद्धि की शक्ति से सम्पन्न है।यही चीज़ उसे अन्य जीवों से अलग करती है। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) कहते हैं: "ईश्वर ने विवेक एवं बुद्धि से उत्तम कोई दूसरी चीज़ पैदा नहीं की। अथवा विवेक से बढ़कर उसने कोई चीज़ श्रेष्ठ एवं पूर्ण पैदा नहीं की...।" ज्ञान और पहचान की इस शक्ति एवं क्षमता के साथ ही साथ मनुष्य को यह आज़ादी भी दी गई है कि वह अपने लिए ऐसा जीवन-मार्ग चुने जो ईश्वर के प्रतिनिधि होने की हैसियत से उसके लायक़ हो, या फिर निम्न से निम्न कोटि के पशुओं एवं जीवों के स्तर से नीचे गिर जाए। मनुष्य पवित्र और निर्दोष पैदा होता है। उसे स्वतन्त्रता प्राप्त है कि चाहे वह अच्छे कार्य करे या पापों में डूब जाये।

ईश्वरीय पथ-प्रदर्शन

मनुष्य मात्र के लिए ईश्वर के अपार प्रेम और उसकी दयालुता ने सही राह ढूंढने के लिए हमें अंधेरे में नहीं छोड़ा है कि इसके लिए हम केवल कोशिश अर्थात बार-बार ग़लतियां करके संभलने की चेष्टा करें। सोचने-समझने की क्षमता प्रदान करने के साथ हमें ईश्वर की ओर से ईश-प्रदर्शन भी प्राप्त है, जो हमारे समक्ष सत्य और ज्ञान का सिद्धान्त भी प्रस्तुत करता है और इस लोक और परलोक में हमारे अस्तित्व की यथार्थता और असलियत पर भी प्रकाश डालता है।

प्रकाशना

मनुष्य-जाति के आरम्भ काल ही से ईश्वर ने अपने पैग़म्बरों को इस उद्देश्य से भेजा कि वह अपने सन्देश भेजे तथा मनुष्यों को वास्तविक शान्ति और एक सच्चे ईश्वर के आज्ञापालन के मार्ग पर चलने का आमंत्रण दे। यही "इस्लाम" है। यह सन्देश निरन्तर मानव-जाति की अनेकों पीढ़ियों को विभिन्न पैग़म्बरों के द्वारा पहुंचाया गया। सभी पैग़म्बरों ने मानव जाति को इसी एक ही पथ की ओर आमंत्रित किया।

ईश्वर के पहले भेजे गए सभी सन्देशों को बाद की पीढ़ियों ने विकृत कर दिया, जिसके नतीजे में पवित्र ईश्वरीय सन्देश परिकल्पनाओं, अन्धविश्वास, मूर्तिपूजा तथा असंगत और ग़लत दार्शनिक विचारधाराओं के समावेश के कारण दूषित एवं कलुषित होकर रह गए। ईश्वरीय धर्म अनेक धर्मों के बाहुल्य में खोकर रह गया। मानव-जाति का इतिहास वास्तव में अंधकार और प्रकाश के मध्य मानव के बहाव का इतिहास है, किन्तु मानव-जाति के प्रति अपार प्यार के कारण ईश्वर ने हमें त्याग नहीं दिया है।

अन्तिम प्रकाशना

जब मनुष्य जाति अन्धकारमय युग की गहराई में पड़ी हुई थी,

तब ईश्वर ने अपने अन्तिम सन्देशवाहक, पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (ईश्वर की उन पर अपार दया और कृपा हो) को मानवता के उद्धार के लिए भेजा। जो ईश्वरीय सन्देश पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल०) पर अवतरित हुआ, वह मनुष्य जाति के लिए अन्तिम एवं स्थायी मार्ग दर्शन है।

सच्चाई का माप-दंड

हम यह कैसे जानें कि कोई प्रकाशना (Revelation) या सन्देश उदाहरणार्थ क़ुरआन ईश्वरीय वाणी है? सत्य के माप-दण्ड को हर व्यक्ति आसानी से समझ सकता है।

1. बुद्धि-संगत शिक्षाएं : चूंकि ईश्वर ने मानव को समझ और बुद्धि प्रदान की है, अतः यह हमारा कर्तव्य है कि हम उसे सत्य को असत्य से पृथक करने में इस्तेमाल करें। अविकृत और सच्चे ईश्वरीय सन्देश को एकदम बुद्धि-संगत होना चाहिए और उसे हर अपक्षपाती व्यक्ति की समझ में आ जाना चाहिए।

2. पूर्णतः : ईश्वर पूर्ण है, अतः उसके संदेश को पूर्ण और ग़लतियों से पाक होना चाहिए। फिर ऐसा भी न हो कि उसमें क्षेपक का आभास हो और उस की बहुत-सी आयतें परस्पर बेमेल मालूम होती हों। उसे अपने बयान में विरोधाभास से बिल्कुल मुक्त होना चाहिए।

3. निराधार परिकल्पनाओं और अन्ध-विश्वास से मुक्त : सच्चा ईश्वरीय संदेश निराधार परिकल्पनाओं और अंध-विश्वासों से मुक्त होगा, क्योंकि इस प्रकार की चीज़ें गौरव, ईश्वर और मानव हर एक की प्रतिष्ठा को आघात पहुंचातीं हैं।

4. विज्ञान-संगत : चूंकि ईश्वर सारे ज्ञान का स्रष्टा है, अतः सच्चा ईश्वरीय संदेश अनिवार्यतः विज्ञान-संगत होगा और उसमें यह क्षमता होगी कि वह वैज्ञानिक चुनौतियों का सामना कर सके और प्रत्येक युग में कर सके।

5. भविष्यवाणी : ईश्वर को विगत, वर्तमान और भविष्य सबका ज्ञान है। अतः उसके संदेश में की गयी भविष्यवाणियां अवश्य पूरी होंगी।

6. मानव द्वारा नकल न की जा सके : ईश्वर का सच्चा संदेश भ्रमातीत और असफलताओं से परे है। मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर है कि वह उस तरह की चीज़ प्रस्तुत कर सके अथवा उसकी नकल उतार सके। ईश्वर का सच्चा सन्देश एक जीवंत चमत्कार है। यह एक खुली किताब है जो मानव को चुनौती देती है कि वह उसका अवलोकन करे और परीक्षण करके स्वयं जांच ले कि वह प्रमाण-पुष्ट है या नहीं।

प्रिय पाठकगण !

'सत्य' को स्वीकार करने के लिए मानव बाध्य नहीं है, किन्तु निश्चय ही यह मानव-प्रतिभा एवं बुद्धि के लिए एक लज्जाजनक बात है कि उसे सत्य की खोज से कोई दिलचस्पी न हो।

इस्लाम सिखाता है कि ईश्वर ने मानव को सोचने-समझने की शक्ति दी है, अतः वह मानव से इसकी आशा करता है कि वह स्वयं निष्पक्ष होकर विधिवत एवं व्यवस्थित रूप से सोचने-समझने की कोशिश करेगा। इस संबंध में वह जो ढंग अपनायेगा, वह यही होगा कि वह चिन्तन और मनन करेगा और प्रश्न उठायेगा और फिर सोच-विचार करके सही नतीजे तक पहुंचने की कोशिश करेगा। (बार-बार ग़लती करके ग़लतियों के सहारे से सत्य को पाने के सिद्धान्त का अनुपालन करने वाला न बनेगा)।

यह सही नहीं होगा कि कोई व्यक्ति आप पर इसलिए दबाव डाले कि आप इस्लाम की किसी शिक्षा को ग्रहण करने का शीघ्र फ़ैसला करें। इस्लाम की शिक्षा तो यह है कि लोगों को इसकी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए कि वे स्वेच्छापूर्वक कोई चुनाव करें, बल्कि

इस्लाम ने तो मनुष्य को यहां तक आज़ादी दी है कि सत्य किसी व्यक्ति पर प्रकट भी हो जाए, फिर भी उसे बाध्य नहीं किया जा सकता कि वह उसे अनिवार्यतः ग्रहण ही कर ले।

किन्तु इस्लाम के विषय में कोई विचार और मत बनाने से पहले आप अपने आप यह प्रश्न करें कि इस्लाम के बारे में क्या आपको पर्याप्त ज्ञान प्राप्त है? आप अपने आप से पूछें कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि आपने इस्लाम के विषय में जो ज्ञान प्राप्त किया, वह ग़ैर-मुस्लिमों के माध्यम से अर्थात् तीसरे दल के स्रोतों से प्राप्त किया है। इसकी बड़ी संभावना है कि ऐसे ग़ैर-मुस्लिमों का अभी स्वयं इस्लामी साहित्य का ज्ञान सरसरी, अधूरा और बे-तर्तीब हो और खुद उन्हीं के लिए अभी इसकी आवश्यकता हो कि वे निष्पक्ष भाव से व्यवस्थित एवं विधिवत् रूप से इस्लाम पर विचार एवं मनन करें।

क्या यह सही हो सकता है कि किसी विशिष्ट पकवान के स्वाद के विषय में किसी दूसरे ऐसे व्यक्ति से केवल सुनकर कोई एक धारणा बना लें, जिसने अनिवार्यतः स्वयं भी उस पकवान को चखा न हो? ठीक इसी प्रकार विश्वसनीय स्रोतों के द्वारा आपको इस्लाम के विषय में ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। फिर इस्लाम के बारे में अपनी कोई धारणा बनाने से पहले यही नहीं कि आप उसे चखें, बल्कि यह भी आवश्यक है कि आप उसे हज़म भी होने दें और भली-भांति उसे पचाकर भी देख लें। इस्लाम को समझने का यदि कोई बुद्धि-संगत तरीका हो सकता है, तो वह यही है।

यह आप पर निर्भर करता है कि आपका अगला क़दम क्या होगा।

प्रत्येक मनुष्य की अपनी इच्छा होती है। कोई आप से आपकी इस इच्छा को छीनकर ईश्वर की इच्छा के सामने समर्पण करने पर बाध्य नहीं कर सकता। आपको स्वयं सत्य की खोज करनी है और स्वयं ही यह फ़ैसला भी करना है कि प्रकट सत्य के प्रति आप क्या नीति अपनाते हैं।